वेदव्यास रचित श्रीमद् भागवत महापुरण के अनुसार कल्कि अवतार
12 वां स्कन्द, 2 रा और 3 रा अध्याय

तत्राथास्ते जनपदास्तच्छीलाचारवादिनः ।
अन्योन्यतो राजभिश्च क्षयं यास्यन्ति पीडिताः ॥ ४३

जब ऐसे लोगोंका शासन होगा, तो देशकी प्रजामें भी वैसे ही स्वभाव, आचरण और भाषणकी वृद्धि हो जायगी। राजालोग तो उनका शोषण करेंगे ही, वे आपसमें भी एक-दूसरेको उत्पीड़ित करेंगे और अन्ततः सब-के-सब नष्ट हो जायँगे ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशस्कन्धे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः

कलियुगके धर्म

श्रीशुक उवाच

ततश्चानुदिनं धर्मः सत्यं शौचं क्षमा दया ।
कालेन बलिना राजन् नङ्क्ष्यत्यायुर्बलं स्मृतिः ॥ १

वित्तमेव कलौ नृणां जन्माचारगुणोदयः ।
धर्मन्यायव्यवस्थायां कारणं बलमेव हि ॥ २

दाम्पत्येऽभिरुचिर्हेतुर्मायैव व्यावहारिके ।
स्त्रीत्वे पुंस्त्वे च हि रतिर्विप्रत्वे सूत्रमेव हि ॥ ३

लिङ्गमेवाश्रमख्यातावन्योन्यापत्तिकारणम् ।
अवृत्त्या न्यायदौर्बल्यं पाण्डित्ये चापलं वचः ॥ ४

अनाढ्यतैवासाधुत्वे साधुत्वे दम्भ एव तु ।
स्वीकार एव चोद्वाहे स्नानमेव प्रसाधनम् ॥ ५

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित्! समय बड़ा बलवान् है; ज्यों-ज्यों घोर कलियुग आता जायगा, त्यों-त्यों उत्तरोत्तर धर्म, सत्य, पवित्रता, क्षमा, दया, आयु, बल और स्मरणशक्तिका लोप होता जायगा॥ १ ॥ कलियुगमें जिसके पास धन होगा, उसीको लोग कुलीन, सदाचारी और सद्गुणी मानेंगे। जिसके हाथमें शक्ति होगी वही धर्म और न्यायकी व्यवस्था अपने अनुकूल करा सकेगा ॥ २ ॥ विवाह-सम्बन्धके लिये कुल-शील-योग्यता आदिकी परख-निरख नहीं रहेगी, युवक-युवतीकी पारस्परिक रुचिसे ही सम्बन्ध हो जायगा। व्यवहारकी निपुणता सचाई और ईमानदारीमें नहीं रहेगी; जो जितना छल-कपट कर सकेगा, वह उतना ही व्यवहारकुशल माना जायगा। स्त्री और पुरुषकी श्रेष्ठताका आधार उनका शील-संयम न होकर केवल रतिकौशल ही रहेगा। ब्राह्मणकी पहचान उसके गुण-स्वभावसे नहीं यज्ञोपवीतसे हुआ करेगी॥ ३ ॥ वस्त्र, दण्ड-कमण्डलु आदिसे ही ब्रह्मचारी, संन्यासी आदि आश्रमियोंकी पहचान होगी और एक-दूसरेका चिह्न स्वीकार कर लेना ही एकसे दूसरे आश्रममें प्रवेशका स्वरूप होगा। जो घूस देने या धन खर्च करनेमें असमर्थ होगा, उसे अदालतोंसे ठीक-ठीक न्याय न मिल सकेगा। जो बोलचालमें जितना चालाक होगा, उसे उतना ही बड़ा पण्डित माना जायगा॥ ४ ॥ असाधुताकी—दोषी होनेकी एक ही पहचान रहेगी—गरीब होना। जो जितना अधिक दम्भ-पाखण्ड कर सकेगा, उसे उतना ही बड़ा साधु समझा जायगा। विवाहके लिये एक-दूसरेकी स्वीकृति ही पर्याप्त होगी, शास्त्रीय विधि-विधानकी—संस्कार आदिकी कोई आवश्यकता न समझी जायगी। बाल आदि सँवारकर कपड़े-लत्तेसे लैस हो जाना ही स्नान समझा जायगा॥ ५ ॥

दूरे वार्ययनं तीर्थं लावण्यं केशधारणम् ।
उदरम्भरता स्वार्थः सत्यत्वे धार्ष्ट्यमेव हि ॥ ६

दाक्ष्यं कुटुम्बभरणं यशोऽर्थे धर्मसेवनम् ।
एवं प्रजाभिर्दुष्टाभिराकीर्णे क्षितिमण्डले ॥ ७

ब्रह्मविट्क्षत्रशूद्राणां यो बली भविता नृपः ।
प्रजा हि लुब्धै राजन्यैर्निर्घृणैर्दस्युधर्मभिः ॥ ८

आच्छिन्नदारद्रविणा यास्यन्ति गिरिकाननम् ।
शाकमूलामिषक्षौद्रफलपुष्पाष्टिभोजनाः ॥ ९

अनावृष्ट्या विनङ्क्ष्यन्ति दुर्भिक्षकरपीडिताः ।
शीतवातातपप्रावृड्हिमैरन्योन्यतः प्रजाः ॥ १०

क्षुत्तृड्भ्यां व्याधिभिश्चैव सन्तप्स्यन्ते[1] च चिन्तया ।
त्रिंशद्विंशतिवर्षाणि परमायुः कलौ नृणाम् ॥ ११

क्षीयमाणेषु देहेषु देहिनां कलिदोषतः ।
वर्णाश्रमवतां धर्मे नष्टे वेदपथे नृणाम् ॥ १२

पाखण्डप्रचुरे धर्मे दस्युप्रायेषु राजसु ।
चौर्यानृतवृथाहिंसानानावृत्तिषु वै नृषु ॥ १३

शूद्रप्रायेषु वर्णेषुच्छागप्रायासु धेनुषु ।
गृहप्रायेष्वाश्रमेषु यौनप्रायेषु बन्धुषु ॥ १४

लोग दूरके तालाबको तीर्थ मानेंगे और निकटके तीर्थ गङ्गा-गोमती, माता-पिता आदिकी उपेक्षा करेंगे। सिरपर बड़े-बड़े बाल—काकुल रखाना ही शारीरिक सौन्दर्यका चिह्न समझा जायगा और जीवनका सबसे बड़ा पुरुषार्थ होगा—अपना पेट भर लेना। जो जितनी ढिठाईसे बात कर सकेगा, उसे उतना ही सच्चा समझा जायगा ॥ ६ ॥ योग्यता चतुराईका सबसे बड़ा लक्षण यह होगा कि मनुष्य अपने कुटुम्बका पालन कर ले। धर्मका सेवन यशके लिये किया जायगा। इस प्रकार जब सारी पृथ्वीपर दुष्टोंका बोलबाला हो जायगा, तब राजा होनेका कोई नियम न रहेगा; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्रोंमें जो बली होगा, वही राजा बन बैठेगा। उस समयके नीच राजा अत्यन्त निर्दय एवं क्रूर होंगे; लोभी तो इतने होंगे कि उनमें और लुटेरोंमें कोई अन्तर न किया जा सकेगा। वे प्रजाकी पूँजी एवं पत्नियोंतकको छीन लेंगे। उनसे डरकर प्रजा पहाड़ों और जंगलोंमें भाग जायगी। उस समय प्रजा तरह-तरहके शाक, कन्द-मूल, मांस, मधु, फल-फूल और बीज-गुठली आदि खा-खाकर अपना पेट भरेगी ॥ ७—९ ॥ कभी वर्षा न होगी—सूखा पड़ जायगा; तो कभी कर-पर-कर लगाये जायँगे। कभी कड़ाकेकी सर्दी पड़ेगी तो कभी पाला पड़ेगा, कभी आँधी चलेगी, कभी गरमी पड़ेगी तो कभी बाढ़ आ जायगी। इन उत्पातोंसे तथा आपसके सङ्घर्षसे प्रजा अत्यन्त पीड़ित होगी, नष्ट हो जायगी ॥ १० ॥ लोग भूख-प्यास तथा नाना प्रकारकी चिन्ताओंसे दुःखी रहेंगे। रोगोंसे तो उन्हें छुटकारा ही न मिलेगा। कलियुगमें मनुष्योंकी परमायु केवल बीस या तीस वर्षकी होगी ॥ ११ ॥

परीक्षित्! कलिकालके दोषसे प्राणियोंके शरीर छोटे-छोटे, क्षीण और रोगग्रस्त होने लगेंगे। वर्ण और आश्रमोंका धर्म बतलानेवाला वेद-मार्ग नष्टप्राय हो जायगा ॥ १२ ॥ धर्ममें पाखण्डकी प्रधानता हो जायगी। राजे-महाराजे डाकू-लुटेरोंके समान हो जायँगे। मनुष्य चोरी, झूठ तथा निरपराध हिंसा आदि नाना प्रकारके कुकर्मोंसे जीविका चलाने लगेंगे ॥ १३ ॥ चारों वर्णोंके लोग शूद्रोंके समान हो जायँगे। गौएँ बकरियोंकी तरह छोटी-छोटी और कम दूध देनेवाली हो जायँगी। वानप्रस्थी और संन्यासी आदि विरक्त आश्रमवाले भी घर-गृहस्थी जुटाकर गृहस्थोंका-सा व्यापार करने लगेंगे। जिनसे वैवाहिक सम्बन्ध है, उन्हींको अपना सम्बन्धी माना जायगा ॥ १४ ॥

१. सन्तप्यन्ते ।

अणुप्रायास्वोषधीषु शमीप्रायेषु स्थास्नुषु ।
विद्युत्प्रायेषु मेघेषु शून्यप्रायेषु सद्मसु ॥ १५

इत्थं कलौ गतप्राये जने[1] तु खरधर्मिणि ।
धर्मत्राणाय सत्त्वेन भगवानवतरिष्यति ॥ १६

चराचरगुरोर्विष्णोरीश्वरस्याखिलात्मनः ।
धर्मत्राणाय साधूनां जन्म कर्मापनुत्तये ॥ १७

सम्भलग्राममुख्यस्य ब्राह्मणस्य महात्मनः ।
भवने विष्णुयशसः कल्किः प्रादुर्भविष्यति ॥ १८

अश्वमाशुगमारुह्य देवदत्तं जगत्पतिः ।
असिनासाधुदमनमष्टैश्वर्यगुणान्वितः ॥ १९

विचरन्नाशुना[2] क्षोण्यां हयेनाप्रतिमद्युतिः ।
नृपलिङ्गच्छदो दस्यून् कोटिशो निहनिष्यति ॥ २०

अथ तेषां भविष्यन्ति मनांसि विशदानि वै ।
वासुदेवाङ्गरागातिपुण्यगन्धानिलस्पृशाम् ।
पौरजानपदानां वै हतेष्वखिलदस्युषु ॥ २१

तेषां प्रजाविसर्गश्च स्थविष्ठः सम्भविष्यति ।
वासुदेवे भगवति सत्त्वमूर्तौ हृदि स्थिते ॥ २२

यदावतीर्णो भगवान् कल्किर्धर्मपतिर्हरिः ।
कृतं भविष्यति तदा प्रजासूतिश्च सात्त्विकी ॥ २३

धान, जौ, गेहूँ आदि धान्योंके पौधे छोटे-छोटे होने लगेंगे। वृक्षोंमें अधिकांश शमीके समान छोटे और कँटीले वृक्ष ही रह जायँगे। बादलोंमें बिजली तो बहुत चमकेगी, परन्तु वर्षा कम होगी। गृहस्थोंके घर अतिथि-सत्कार या वेदध्वनिसे रहित होनेके कारण अथवा जनसंख्या घट जानेके कारण सूने-सूने हो जायँगे ॥ १५ ॥ परीक्षित्! अधिक क्या कहें—कलियुगका अन्त होते-होते मनुष्योंका स्वभाव गधों-जैसा दुःसह बन जायगा, लोग प्रायः गृहस्थीका भार ढोनेवाले और विषयी हो जायँगे। ऐसी स्थितिमें धर्मकी रक्षा करनेके लिये सत्त्वगुण स्वीकार करके स्वयं भगवान् अवतार ग्रहण करेंगे ॥ १६ ॥

प्रिय परीक्षित्! सर्वव्यापक भगवान् विष्णु सर्वशक्तिमान् हैं। वे सर्वस्वरूप होनेपर भी चराचर जगत्के सच्चे शिक्षक—सद्गुरु हैं। वे साधु—सज्जन पुरुषोंके धर्मकी रक्षाके लिये, उनके कर्मका बन्धन काटकर उन्हें जन्म-मृत्युके चक्रसे छुड़ानेके लिये अवतार ग्रहण करते हैं ॥ १७ ॥ उन दिनों शम्भल-ग्राममें विष्णुयश नामके एक श्रेष्ठ ब्राह्मण होंगे। उनका हृदय बड़ा उदार एवं भगवद्भक्तिसे पूर्ण होगा। उन्हींके घर कल्किभगवान् अवतार ग्रहण करेंगे ॥ १८ ॥ श्रीभगवान् ही अष्टसिद्धियोंके और समस्त सद्गुणोंके एकमात्र आश्रय हैं। समस्त चराचर जगत्के वे ही रक्षक और स्वामी हैं। वे देवदत्त नामक शीघ्रगामी घोड़ेपर सवार होकर दुष्टोंको तलवारके घाट उतारकर ठीक करेंगे ॥ १९ ॥ उनके रोम-रोमसे अतुलनीय तेजकी किरणें छिटकती होंगी। वे अपने शीघ्रगामी घोड़ेसे पृथ्वीपर सर्वत्र विचरण करेंगे और राजाके वेषमें छिपकर रहनेवाले कोटि-कोटि डाकुओंका संहार करेंगे ॥ २० ॥

प्रिय परीक्षित्! जब सब डाकुओंका संहार हो चुकेगा, तब नगरकी और देशकी सारी प्रजाका हृदय पवित्रतासे भर जायगा; क्योंकि भगवान् कल्किके शरीरमें लगे हुए अङ्गरागका स्पर्श पाकर अत्यन्त पवित्र हुई वायु उनका स्पर्श करेगी और इस प्रकार वे भगवान्के श्रीविग्रहकी दिव्य गन्ध प्राप्त कर सकेंगे ॥ २१ ॥ उनके पवित्र हृदयोंमें सत्त्वमूर्ति भगवान् वासुदेव विराजमान होंगे और फिर उनकी सन्तान पहलेकी भाँति हृष्ट-पुष्ट और बलवान् होने लगेगी ॥ २२ ॥ प्रजाके नयन-मनोहारी हरि ही धर्मके रक्षक और स्वामी हैं। वे ही भगवान् जब कल्किके रूपमें अवतार ग्रहण करेंगे, उसी समय सत्ययुगका प्रारम्भ हो जायगा और प्रजाकी सन्तान-

१. नेषु खरधार्मिषु। २. त्रसिना।

यदा चन्द्रश्च सूर्यश्च तथा तिष्यबृहस्पती।
एकराशौ समेष्यन्ति तदा भवति तत् कृतम्॥ २४

येऽतीता[1] वर्तमाना ये भविष्यन्ति च पार्थिवाः।
ते त उद्देशतः प्रोक्ता वंशीयाः सोमसूर्ययोः[2]॥ २५

आरभ्य भवतो जन्म यावन्नन्दाभिषेचनम्।
एतद् वर्षसहस्रं तु शतं पञ्चदशोत्तरम्॥ २६

सप्तर्षीणां तु यौ[3] पूर्वौ दृश्येते उदितौ दिवि।
तयोस्तु मध्ये नक्षत्रं दृश्यते यत् समं निशि॥ २७

तेनैत ऋषयो युक्तास्तिष्ठन्त्यब्दशतं नृणाम्।
ये त्वदीये द्विजाः काले अधुना चाश्रिता मघाः॥ २८

विष्णोर्भगवतो भानुः कृष्णाख्योऽसौ दिवं गतः।
तदाविशत् कलिर्लोकं पापे यद् रमते जनः॥ २९

यावत् स पादपद्माभ्यां स्पृशन्नास्ते रमापतिः।
तावत् कलिर्वै पृथिवीं पराक्रान्तुं न चाशकत्॥ ३०

यदा देवर्षयः सप्त मघासु विचरन्ति हि।
तदा प्रवृत्तस्तु कलिर्द्वादशाब्दशतात्मकः॥ ३१

यदा मघाभ्यो यास्यन्ति पूर्वाषाढां महर्षयः।
तदा नन्दात् प्रभृत्येष कलिर्वृद्धिं गमिष्यति॥ ३२

यस्मिन् कृष्णो दिवं यातस्तस्मिन्नेव तदाहनि।
प्रतिपन्नं कलियुगमिति प्राहुः पुराविदः॥ ३३

दिव्याब्दानां सहस्रान्ते चतुर्थे तु पुनः कृतम्।
भविष्यति यदा नृणां मन आत्मप्रकाशकम्॥ ३४

परम्परा स्वयं ही सत्त्वगुणसे युक्त हो जायगी॥ २३॥ जिस समय चन्द्रमा, सूर्य और बृहस्पति एक ही समय एक ही साथ पुष्य नक्षत्रके प्रथम पलमें प्रवेश करते हैं, एक राशिपर आते हैं, उसी समय सत्ययुगका प्रारम्भ होता है॥ २४॥

परीक्षित्! चन्द्रवंश और सूर्यवंशमें जितने राजा हो गये हैं या होंगे, उन सबका मैंने संक्षेपसे वर्णन कर दिया॥ २५॥ तुम्हारे जन्मसे लेकर राजा नन्दके अभिषेकतक एक हजार एक सौ पंद्रह वर्षका समय लगेगा॥ २६॥ जिस समय आकाशमें सप्तर्षियोंका उदय होता है, उस समय पहले उनमेंसे दो ही तारे दिखायी पड़ते हैं। उनके बीचमें दक्षिणोत्तर रेखापर समभागमें अश्विनी आदि नक्षत्रोंमेंसे एक नक्षत्र दिखायी पड़ता है॥ २७॥ उस नक्षत्रके साथ सप्तर्षिगण मनुष्योंकी गणनासे सौ वर्षतक रहते हैं। वे तुम्हारे जन्मके समय और इस समय भी मघा नक्षत्रपर स्थित हैं॥ २८॥

स्वयं सर्वव्यापक सर्वशक्तिमान् भगवान् ही शुद्ध सत्त्वमय विग्रहके साथ श्रीकृष्णके रूपमें प्रकट हुए थे। वे जिस समय अपनी लीला संवरण करके परमधामको पधार गये, उसी समय कलियुगने संसारमें प्रवेश किया। उसीके कारण मनुष्योंकी मति-गति पापकी ओर ढुलक गयी॥ २९॥ जबतक लक्ष्मीपति भगवान् श्रीकृष्ण अपने चरणकमलोंसे पृथ्वीका स्पर्श करते रहे, तबतक कलियुग पृथ्वीपर अपना पैर न जमा सका॥ ३०॥ परीक्षित्! जिस समय सप्तर्षि मघा नक्षत्रपर विचरण करते रहते हैं, उसी समय कलियुगका प्रारम्भ होता है। कलियुगकी आयु देवताओंकी वर्षगणनासे बारह सौ वर्षोंकी अर्थात् मनुष्योंकी गणनाके अनुसार चार लाख बत्तीस हजार वर्षकी है॥ ३१॥ जिस समय सप्तर्षि मघासे चलकर पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें जा चुके होंगे, उस समय राजा नन्दका राज्य रहेगा। तभीसे कलियुगकी वृद्धि शुरू होगी॥ ३२॥ पुरातत्त्ववेत्ता ऐतिहासिक विद्वानोंका कहना है कि जिस दिन भगवान् श्रीकृष्णने अपने परम-धामको प्रयाण किया, उसी दिन, उसी समय कलियुगका प्रारम्भ हो गया॥ ३३॥ परीक्षित्! जब देवताओंकी वर्षगणनाके अनुसार एक हजार वर्ष बीत चुकेंगे, तब कलियुगके अन्तिम दिनोंमें फिरसे कल्किभगवान्‌की कृपासे मनुष्योंके मनमें सात्त्विकताका सञ्चार होगा, लोग अपने वास्तविक स्वरूपको जान सकेंगे और तभीसे सत्ययुगका प्रारम्भ भी होगा॥ ३४॥

१. अतीता। २. सूर्यसोमयोः। ३. पूर्वौ यौ।

इत्येष मानवो वंशो यथा संख्यायते भुवि ।
तथा विट्शूद्रविप्राणां तास्ता ज्ञेया युगे युगे ॥ ३५

एतेषां नामलिङ्गानां पुरुषाणां महात्मनाम् ।
कथामात्रावशिष्टानां कीर्तिरेव स्थिता भुवि ॥ ३६

देवापिः शन्तनोर्भ्राता मरुश्चेक्ष्वाकुवंशजः ।
कलापग्राम आसाते महायोगबलान्वितौ ॥ ३७

ताविहैत्य कलेरन्ते वासुदेवानुशिक्षितौ[1] ।
वर्णाश्रमयुतं धर्मं पूर्ववत् प्रथयिष्यतः ॥ ३८

कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चेति चतुर्युगम् ।
अनेन क्रमयोगेन भुवि प्राणिषु वर्तते ॥ ३९

राजन्नेते मया प्रोक्ता नरदेवास्तथापरे ।
भूमौ ममत्वं कृत्वान्ते हित्वेमां निधनं गताः ॥ ४०

कृमिविड्भस्मसंज्ञान्ते राजनाम्नोऽपि[2] यस्य च ।
भूतध्रुक् तत्कृते स्वार्थं किं वेद निरयो यतः ॥ ४१

कथं सेयमखण्डा भूः पूर्वैर्मे पुरुषैर्धृता ।
मत्पुत्रस्य च पौत्रस्य मत्पूर्वा वंशजस्य वा ॥ ४२

तेजोऽबन्नमयं कायं गृहीत्वाऽऽत्मतयाबुधाः ।
महीं ममतया चोभौ हित्वान्तेऽदर्शनं गताः ॥ ४३

ये ये भूपतयो राजन् भुञ्जन्ति भुवमोजसा ।
कालेन ते कृताः सर्वे कथामात्राः कथासु च ॥ ४४

परीक्षित्! मैंने तो तुमसे केवल मनुवंशका, सो भी संक्षेपसे वर्णन किया है। जैसे मनुवंशकी गणना होती है, वैसे ही प्रत्येक युगमें ब्राह्मण, वैश्य और शूद्रोंकी भी वंशपरम्परा समझनी चाहिये ॥ ३५ ॥ राजन्! जिन पुरुषों और महात्माओंका वर्णन मैंने तुमसे किया है, अब केवल नामसे ही उनकी पहचान होती है। अब वे नहीं हैं, केवल उनकी कथा रह गयी है। अब उनकी कीर्ति ही पृथ्वीपर जहाँ-तहाँ सुननेको मिलती है ॥ ३६ ॥ भीष्मपितामहके पिता राजा शन्तनुके भाई देवापि और इक्ष्वाकुवंशी मरु इस समय कलाप-ग्राममें स्थित हैं। वे बहुत बड़े योगबलसे युक्त हैं ॥ ३७ ॥ कलियुगके अन्तमें कल्किभगवान्‌की आज्ञासे वे फिर यहाँ आयेंगे और पहलेकी भाँति ही वर्णाश्रमधर्मका विस्तार करेंगे ॥ ३८ ॥ सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग—ये ही चार युग हैं; ये पूर्वोक्त क्रमके अनुसार अपने-अपने समयमें पृथ्वीके प्राणियोंपर अपना प्रभाव दिखाते रहते हैं ॥ ३९ ॥ परीक्षित्! मैंने तुमसे जिन राजाओंका वर्णन किया है, वे सब और उनके अतिरिक्त दूसरे राजा भी इस पृथ्वीको 'मेरी-मेरी' करते रहे, परन्तु अन्तमें मरकर धूलमें मिल गये ॥ ४० ॥ इस शरीरको भले ही कोई राजा कह ले; परन्तु अन्तमें यह कीड़ा, विष्ठा अथवा राखके रूपमें ही परिणत होगा, राख ही होकर रहेगा। इसी शरीरके या इसके सम्बन्धियोंके लिये जो किसी भी प्राणीको सताता है, वह न तो अपना स्वार्थ जानता है और न तो परमार्थ। क्योंकि प्राणियोंको सताना तो नरकका द्वार है ॥ ४१ ॥ वे लोग यही सोचा करते हैं कि मेरे दादा-परदादा इस अखण्ड भूमण्डलका शासन करते थे; अब यह मेरे अधीन किस प्रकार रहे और मेरे बाद मेरे बेटे-पोते, मेरे वंशज किस प्रकार इसका उपभोग करें ॥ ४२ ॥ वे मूर्ख इस आग, पानी और मिट्टीके शरीरको अपना आपा मान बैठते हैं और बड़े अभिमानके साथ डींग हाँकते हैं कि यह पृथ्वी मेरी है। अन्तमें वे शरीर और पृथ्वी दोनोंको छोड़कर स्वयं ही अदृश्य हो जाते हैं ॥ ४३ ॥ प्रिय परीक्षित्! जो-जो नरपति बड़े उत्साह और बल-पौरुषसे इस पृथ्वीके उपभोगमें लगे रहे, उन सबको कालने अपने विकराल गालमें धर दबाया। अब केवल इतिहासमें उनकी कहानी ही शेष रह गयी है ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशस्कन्धे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

१. शासितौ। २. राजन्यास्त्वाधिपस्य।

अथ तृतीयोऽध्यायः

राज्य युगधर्म और कलियुगके दोषोंसे बचनेका उपाय—नामसङ्कीर्तन

श्रीशुक उवाच

दृष्ट्वाऽऽत्मनि जये[1] व्यग्रान् नृपान् हसति भूरियम्।
अहो मा विजिगीषन्ति मृत्योः क्रीडनका नृपाः॥ १

काम एष नरेन्द्राणां मोघः स्याद् विदुषामपि।
येन फेनोपमे पिण्डे येऽतिविश्रम्भिता नृपाः॥ २

पूर्वं निर्जित्य षड्वर्गं जेष्यामो राजमन्त्रिणः।
ततः सचिवपौराप्तकरीन्द्रानस्य कण्टकान्॥ ३

एवं क्रमेण जेष्यामः पृथ्वीं सागरमेखलाम्।
इत्याशाबद्धहृदया न पश्यन्त्यन्तिकेऽन्तकम्॥ ४

समुद्रावरणां जित्वा मां विशन्त्यब्धिमोजसा।
कियदात्मजयस्यैतन्मुक्तिरात्मजये फलम्॥ ५

यां विसृज्यैव मनवस्तत्सुताश्च कुरूद्वह।
गता यथागतं युद्धे तां मां जेष्यन्त्यबुद्धयः॥ ६

मत्कृते पितृपुत्राणां भ्रातृणां चापि विग्रहः।
जायते ह्यसतां राज्ये ममताबद्धचेतसाम्॥ ७

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित्! जब पृथ्वी देखती है कि राजा लोग मुझपर विजय प्राप्त करनेके लिये उतावले हो रहे हैं, तब वह हँसने लगती है और कहती है—"कितने आश्चर्यकी बात है कि ये राजा लोग, जो स्वयं मौतके खिलौने हैं, मुझे जीतना चाहते हैं॥ १॥ राजाओंसे यह बात छिपी नहीं है कि वे एक-न-एक दिन मर जायँगे, फिर भी वे व्यर्थमें ही मुझे जीतनेकी कामना करते हैं। सचमुच इस कामनासे अंधे होनेके कारण ही वे पानीके बुलबुलेके समान क्षणभङ्गुर शरीरपर विश्वास कर बैठते हैं और धोखा खाते हैं॥ २॥ वे सोचते हैं कि 'हम पहले मनके सहित अपनी पाँचों इन्द्रियोंपर विजय प्राप्त करेंगे—अपने भीतरी शत्रुओंको वशमें करेंगे; क्योंकि इनको जीते बिना बाहरी शत्रुओंको जीतना कठिन है। उसके बाद अपने शत्रुके मन्त्रियों, अमात्यों, नागरिकों, नेताओं और समस्त सेनाको भी वशमें कर लेंगे। जो भी हमारे विजय-मार्गमें काँटे बोयेगा, उसे हम अवश्य जीत लेंगे॥ ३॥ इस प्रकार धीरे-धीरे क्रमसे सारी पृथ्वी हमारे अधीन हो जायगी और फिर तो समुद्र ही हमारे राज्यकी खाईका काम करेगा।' इस प्रकार वे अपने मनमें अनेकों आशाएँ बाँध लेते हैं और उन्हें यह बात बिलकुल नहीं सूझती कि उनके सिरपर काल सवार है॥ ४॥ यहींतक नहीं, जब एक द्वीप उनके वशमें हो जाता है, तब वे दूसरे द्वीपपर विजय करनेके लिये बड़ी शक्ति और उत्साहके साथ समुद्रयात्रा करते हैं। अपने मनको, इन्द्रियोंको वशमें करके लोग मुक्ति प्राप्त करते हैं, परन्तु ये लोग उनको वशमें करके भी थोड़ा-सा भूभाग ही प्राप्त करते हैं। इतने परिश्रम और आत्मसंयमका यह कितना तुच्छ फल है!"॥ ५॥ परीक्षित्! पृथ्वी कहती है कि 'बड़े-बड़े मनु और उनके वीर पुत्र मुझे ज्यों-की-त्यों छोड़कर जहाँसे आये थे, वहीं खाली हाथ लौट गये, मुझे अपने साथ न ले जा सके। अब ये मूर्ख राजा मुझे युद्धमें जीतकर वशमें करना चाहते हैं॥ ६॥ जिनके चित्तमें यह बात दृढ़ मूल हो गयी है कि यह पृथ्वी मेरी है, उन दुष्टोंके राज्यमें मेरे लिये पिता-पुत्र और भाई-भाई भी आपसमें लड़ बैठते हैं॥ ७॥

१. यव्यग्रा०।

ममैवेयं मही कृत्स्ना न ते मूढेति वादिनः।
स्पर्धमाना मिथो घ्नन्ति म्रियन्ते मत्कृते नृपाः॥ ८

पृथुः पुरूरवा गाधिर्नहुषो[1] भरतोऽर्जुनः।
मान्धाता सगरो रामः खट्वाङ्गो धुन्धुहा रघुः॥ ९

तृणबिन्दुर्ययातिश्च शर्यातिः शन्तनुर्गयः।
भगीरथः कुवलयाश्वः ककुत्स्थो नैषधो नृगः॥ १०

हिरण्यकशिपुर्वृत्रो रावणो लोकरावणः।
नमुचिः शम्बरो भौमो हिरण्याक्षोऽथ तारकः॥ ११

अन्ये च बहवो दैत्या राजानो ये महेश्वराः[2]।
सर्वे सर्वविदः शूराः सर्वे सर्वजितोऽजिताः॥ १२

ममतां मय्यवर्तन्त कृत्वोच्चैर्मर्त्यधर्मिणः।
कथावशेषाः कालेन ह्यकृतार्थाः कृता विभो॥ १३

कथा इमास्ते कथिता महीयसां
विताय लोकेषु यशः परेयुषाम्।
विज्ञानवैराग्यविवक्षया विभो
वचोविभूतीर्न तु पारमार्थ्यम्॥ १४

यस्तूत्तमश्लोकगुणानुवादः
संगीयतेऽभीक्ष्णममङ्गलघ्नः।
तमेव नित्यं शृणुयादभीक्ष्णं
कृष्णेऽमलां भक्तिमभीप्समानः॥ १५

राजोवाच

केनोपायेन भगवन् कलेर्दोषान् कलौ जनाः।
विधमिष्यन्त्युपचितांस्तन्मे ब्रूहि यथा मुने॥ १६

युगानि युगधर्मांश्च मानं प्रलयकल्पयोः।
कालस्येश्वररूपस्य गतिं विष्णोर्महात्मनः॥ १७

वे परस्पर इस प्रकार कहते हैं कि 'ओ मूढ़! यह सारी पृथ्वी मेरी ही है, तेरी नहीं', इस प्रकार राजा लोग एक-दूसरेको कहते-सुनते हैं, एक-दूसरेसे स्पर्द्धा करते हैं, मेरे लिये एक-दूसरेको मारते हैं और स्वयं मर मिटते हैं॥ ८॥ पृथु, पुरूरवा, गाधि, नहुष, भरत, सहस्रबाहु, अर्जुन, मान्धाता, सगर, राम, खट्वाङ्ग, धुन्धुमार, रघु, तृणबिन्दु, ययाति, शर्याति, शन्तनु, गय, भगीरथ, कुवलयाश्व, ककुत्स्थ, नल, नृग, हिरण्यकशिपु, वृत्रासुर, लोकद्रोही रावण, नमुचि, शम्बर, भौमासुर, हिरण्याक्ष और तारकासुर तथा और बहुत-से दैत्य एवं शक्तिशाली नरपति हो गये। ये सब लोग सब कुछ समझते थे, शूर थे, सभीने दिग्विजयमें दूसरोंको हरा दिया; किन्तु दूसरे लोग इन्हें न जीत सके, परन्तु सब-के-सब मृत्युके ग्रास बन गये। राजन्! उन्होंने अपने पूरे अन्तःकरणसे मुझसे ममता की और समझा कि 'यह पृथ्वी मेरी है'। परन्तु विकराल कालने उनकी लालसा पूरी न होने दी। अब उनके बल-पौरुष और शरीर आदिका कुछ पता ही नहीं है। केवल उनकी कहानी मात्र शेष रह गयी है॥ ९—१३॥

परीक्षित्! संसारमें बड़े-बड़े प्रतापी और महान् पुरुष हुए हैं। वे लोकोंमें अपने यशका विस्तार करके यहाँसे चल बसे। मैंने तुम्हें ज्ञान और वैराग्यका उपदेश करनेके लिये ही उनकी कथा सुनायी है। यह सब वाणीका विलास मात्र है। इसमें पारमार्थिक सत्य कुछ भी नहीं है॥ १४॥ भगवान् श्रीकृष्णका गुणानुवाद समस्त अमङ्गलोंका नाश करनेवाला है, बड़े-बड़े महात्मा उसीका गान करते रहते हैं। जो भगवान् श्रीकृष्णके चरणोंमें अनन्य प्रेममयी भक्तिकी लालसा रखता हो, उसे नित्य-निरन्तर भगवान्‌के दिव्य गुणानुवादका ही श्रवण करते रहना चाहिये॥ १५॥

राजा परीक्षित्‌ने पूछा—भगवन्! मुझे तो कलियुगमें राशि-राशि दोष ही दिखायी दे रहे हैं। उस समय लोग किस उपायसे उन दोषोंका नाश करेंगे। इसके अतिरिक्त युगोंका स्वरूप, उनके धर्म, कल्पकी स्थिति और प्रलयकालके मान एवं सर्वव्यापक सर्वशक्तिमान् भगवान्‌के कालरूपका भी यथावत् वर्णन कीजिये॥ १६-१७॥

१. धिर्भरतो नहुषो। २. नरेश्वराः।

श्रीशुक उवाच

कृते प्रवर्तते धर्मश्चतुष्पात्तज्जनैर्धृतः[1] ।
सत्यं दया तपो दानमिति पादा विभोर्नृप ॥ १८

सन्तुष्टाः करुणा मैत्राः शान्ता दान्तास्तितिक्षवः ।
आत्मारामाः समदृशः प्रायशः श्रमणा[2] जनाः ॥ १९

त्रेतायां धर्मपादानां तुर्यांशो हीयते शनैः ।
अधर्मपादैरनृतहिंसासन्तोषविग्रहैः ॥ २०

तदा क्रियातपोनिष्ठा नातिहिंस्रा[3] न लम्पटाः ।
त्रैवर्गिकास्त्रयीवृद्धा वर्णा ब्रह्मोत्तरा नृप ॥ २१

तपःसत्यदयादानेष्वर्धं ह्रसति द्वापरे ।
हिंसातुष्ट्यनृतद्वेषैर्धर्मस्याधर्मलक्षणैः ॥ २२

यशस्विनो महाशालाः स्वाध्यायाध्ययने रताः ।
आढ्याः कुटुम्बिनो हृष्टा वर्णाः क्षत्रद्विजोत्तराः[4] ॥ २३

कलौ तु धर्महेतूनां तुर्यांशोऽधर्महेतुभिः ।
एधमानैः क्षीयमाणो ह्यन्ते सोऽपि विनङ्क्ष्यति[5] ॥ २४

तस्मिँल्लुब्धा दुराचारा निर्दयाः शुष्कवैरिणः ।
दुर्भगा भूरितर्षाश्च शूद्रदाशोत्तराः[6] प्रजाः ॥ २५

सत्त्वं रजस्तम इति दृश्यन्ते पुरुषे गुणाः ।
कालसञ्चोदितास्ते[7] वै परिवर्तन्त आत्मनि ॥ २६

प्रभवन्ति यदा सत्त्वे मनोबुद्धीन्द्रियाणि च ।
तदा कृतयुगं विद्याज्ज्ञाने तपसि यद् रुचिः ॥ २७

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित्! सत्ययुगमें धर्मके चार चरण होते हैं; वे चरण हैं—सत्य, दया, तप और दान। उस समयके लोग पूरी निष्ठाके साथ अपने-अपने धर्मका पालन करते हैं। धर्म स्वयं भगवान्‌का स्वरूप है ॥ १८ ॥ सत्ययुगके लोग बड़े सन्तोषी और दयालु होते हैं। वे सबसे मित्रताका व्यवहार करते और शान्त रहते हैं। इन्द्रियाँ और मन उनके वशमें रहते हैं और सुख-दुःख आदि द्वन्द्वोंको वे समान भावसे सहन करते हैं। अधिकांश लोग तो समदर्शी और आत्माराम होते हैं और बाकी लोग स्वरूप-स्थितिके लिये अभ्यासमें तत्पर रहते हैं ॥ १९ ॥ परीक्षित्! धर्मके समान अधर्मके भी चार चरण हैं—असत्य, हिंसा, असन्तोष और कलह। त्रेतायुगमें इनके प्रभावसे धीरे-धीरे धर्मके सत्य आदि चरणोंका चतुर्थांश क्षीण हो जाता है ॥ २० ॥ राजन्! उस समय वर्णोंमें ब्राह्मणोंकी प्रधानता अक्षुण्ण रहती है। लोगोंमें अत्यन्त हिंसा और लम्पटताका अभाव रहता है। सभी लोग कर्मकाण्ड और तपस्यामें निष्ठा रखते हैं और अर्थ, धर्म एवं कामरूप त्रिवर्गका सेवन करते हैं। अधिकांश लोग कर्मप्रतिपादक वेदोंके पारदर्शी विद्वान् होते हैं ॥ २१ ॥ द्वापरयुगमें हिंसा, असन्तोष, झूठ और द्वेष—अधर्मके इन चरणोंकी वृद्धि हो जाती है एवं इनके कारण धर्मके चारों चरण—तपस्या, सत्य, दया और दान आधे-आधे क्षीण हो जाते हैं ॥ २२ ॥ उस समयके लोग बड़े यशस्वी, कर्मकाण्डी और वेदोंके अध्ययन-अध्यापनमें बड़े तत्पर होते हैं। लोगोंके कुटुम्ब बड़े-बड़े होते हैं, प्रायः लोग धनाढ्य एवं सुखी होते हैं। उस समय वर्णोंमें क्षत्रिय और ब्राह्मण दो वर्णोंकी प्रधानता रहती है ॥ २३ ॥ कलियुगमें तो अधर्मके चारों चरण अत्यन्त बढ़ जाते हैं। उनके कारण धर्मके चारों चरण क्षीण होने लगते हैं और उनका चतुर्थांश ही बच रहता है। अन्तमें तो उस चतुर्थांशका भी लोप हो जाता है ॥ २४ ॥ कलियुगमें लोग लोभी, दुराचारी और कठोरहृदय होते हैं। वे झूठमूठ एक-दूसरेसे वैर मोल ले लेते हैं, एवं लालसा-तृष्णाकी तरङ्गोंमें बहते रहते हैं। उस समयके अभागे लोगोंमें शूद्र, केवट आदिकी ही प्रधानता रहती है ॥ २५ ॥

सभी प्राणियोंमें तीन गुण होते हैं—सत्त्व, रज और तम। कालकी प्रेरणासे समय-समयपर शरीर, प्राण और मनमें उनका ह्रास और विकास भी हुआ करता है ॥ २६ ॥ जिस समय मन, बुद्धि और इन्द्रियाँ सत्त्वगुणमें स्थित होकर अपना-अपना काम करने लगती हैं, उस समय सत्ययुग समझना चाहिये। सत्त्वगुणकी प्रधानताके समय मनुष्य

१. ध्यादो जनै०। २. सुमहाजनाः। ३. सा। ४. तमाः। ५. नश्यति। ६. द्रा दा०। ७. संयोजि०।

यदा[1] धर्मार्थकामेषु भक्तिर्भवति देहिनाम् ।
तदा त्रेता रजोवृत्तिरिति जानीहि[2] बुद्धिमन् ॥ २८

यदा लोभस्त्वसन्तोषो मानो दम्भोऽथ मत्सरः ।
कर्मणां चापि काम्यानां द्वापरं तद् रजस्तमः ॥ २९

यदा मायानृतं तन्द्रा निद्रा हिंसा विषादनम् ।
शोको मोहो भयं दैन्यं स कलिस्तामसः स्मृतः ॥ ३०

यस्मात् क्षुद्रदृशो मर्त्याः क्षुद्रभाग्या महाशनाः ।
कामिनो वित्तहीनाश्च स्वैरिण्यश्च स्त्रियोऽसतीः ॥ ३१

दस्यूत्कृष्टा जनपदा वेदाः पाखण्डदूषिताः ।
राजानश्च प्रजाभक्षाः शिश्नोदरपरा[3] द्विजाः ॥ ३२

अव्रता बटवोऽशौचा भिक्षवश्च कुटुम्बिनः ।
तपस्विनो ग्रामवासा न्यासिनोऽत्यर्थलोलुपाः ॥ ३३

ह्रस्वकाया महाहारा भूर्यपत्या गतह्रियः ।
शश्वत्कटुकभाषिण्यश्चौर्यमायोरुसाहसाः ॥ ३४

पणयिष्यन्ति वै क्षुद्राः किराटाः[4] कूटकारिणः ।
अनापद्यपि मंस्यन्ते वार्तां साधुजुगुप्सिताम् ॥ ३५

ज्ञान और तपस्यासे अधिक प्रेम करने लगता है ॥ २७ ॥ जिस समय मनुष्योंकी प्रवृत्ति और रुचि धर्म, अर्थ और लौकिक-पारलौकिक सुख-भोगोंकी ओर होती है तथा शरीर, मन एवं इन्द्रियाँ रजोगुणमें स्थित होकर काम करने लगती हैं—बुद्धिमान् परीक्षित् ! समझना चाहिये कि उस समय त्रेतायुग अपना काम कर रहा है ॥ २८ ॥ जिस समय लोभ, असन्तोष, अभिमान, दम्भ और मत्सर आदि दोषोंका बोलबाला हो और मनुष्य बड़े उत्साह तथा रुचिके साथ सकाम कर्मोंमें लगना चाहे, उस समय द्वापरयुग समझना चाहिये। अवश्य ही रजोगुण और तमोगुणकी मिश्रित प्रधानताका नाम ही द्वापरयुग है ॥ २९ ॥ जिस समय झूठ-कपट, तन्द्रा-निद्रा, हिंसा-विषाद, शोक-मोह, भय और दीनताकी प्रधानता हो, उसे तमोगुण-प्रधान कलियुग समझना चाहिये ॥ ३० ॥ जब कलियुगका राज्य होता है, तब लोगोंकी दृष्टि क्षुद्र हो जाती है; अधिकांश लोग होते तो हैं अत्यन्त निर्धन, परन्तु खाते हैं बहुत अधिक। उनका भाग्य तो होता है बहुत ही मन्द और चित्तमें कामनाएँ होती हैं बहुत बड़ी-बड़ी। स्त्रियोंमें दुष्टता और कुलटापनकी वृद्धि हो जाती है ॥ ३१ ॥ सारे देशमें, गाँव-गाँवमें लुटेरोंकी प्रधानता एवं प्रचुरता हो जाती है। पाखण्डी लोग अपने नये-नये मत चलाकर मनमाने ढंगसे वेदोंका तात्पर्य निकालने लगते हैं और इस प्रकार उन्हें कलंकित करते हैं। राजा कहलानेवाले लोग प्रजाकी सारी कमाई हड़पकर उन्हें चूसने लगते हैं। ब्राह्मणनामधारी जीव पेट भरने और जननेन्द्रियको तृप्त करनेमें ही लग जाते हैं ॥ ३२ ॥ ब्रह्मचारी लोग ब्रह्मचर्यव्रतसे रहित और अपवित्र रहने लगते हैं। गृहस्थ दूसरोंको भिक्षा देनेके बदले स्वयं भीख माँगने लगते हैं, वानप्रस्थी गाँवोंमें बसने लगते हैं और संन्यासी धनके अत्यन्त लोभी—अर्थपिशाच हो जाते हैं ॥ ३३ ॥ स्त्रियोंका आकार तो छोटा हो जाता है, पर भूख बढ़ जाती है। उन्हें सन्तान बहुत अधिक होती है और वे अपनी कुल मर्यादाका उल्लङ्घन करके लाज-हया—जो उनका भूषण है—छोड़ बैठती हैं। वे सदा-सर्वदा कड़वी बात कहती रहती हैं और चोरी तथा कपटमें बड़ी निपुण हो जाती हैं। उनमें साहस भी बहुत बढ़ जाता है ॥ ३४ ॥ व्यापारियोंके हृदय अत्यन्त क्षुद्र हो जाते हैं। वे कौड़ी—कौड़ीसे लिपटे रहते और छदाम-छदामके लिये धोखाधड़ी करने लगते हैं। और तो क्या—आपत्तिकाल न होनेपर तथा धनी होनेपर भी वे निम्नश्रेणीके व्यापारोंको, जिनकी सत्पुरुष निन्दा करते हैं, ठीक समझने और अपनाने लगते हैं ॥ ३५ ॥

१. यदा कर्मसु काम्येषु भक्तिर्यशसि देहिनाम् । २. नीत बुद्धिमान् । ३. रपरायणाः । ४. रताः कूट० ।

पतिं त्यक्ष्यन्ति निर्द्रव्यं भृत्या अप्यखिलोत्तमम्।
भृत्यं विपन्नं पतयः कौलं गाश्चापयस्विनीः॥ ३६

पितृभ्रातृसुहृज्ज्ञातीन्[1] हित्वा सौरतसौहृदाः।
ननान्दृश्यालसंवादा दीनाः स्त्रैणाः कलौ नराः॥ ३७

शूद्राः प्रतिग्रहीष्यन्ति तपोवेषोपजीविनः।
धर्मं वक्ष्यन्त्यधर्मज्ञा अधिरुह्योत्तमासनम्॥ ३८

नित्यमुद्विग्नमनसो दुर्भिक्षकरकर्शिताः।
निरन्ने भूतले राजन्ननावृष्टिभयातुराः॥ ३९

वासोऽन्नपानशयनव्यवायस्नानभूषणैः।
हीनाः पिशाचसन्दर्शा भविष्यन्ति कलौ प्रजाः॥ ४०

कलौ काकिणिकेऽप्यर्थे विगृह्य त्यक्तसौहृदाः।
त्यक्ष्यन्ति च[2] प्रियान् प्राणान् हनिष्यन्ति स्वकानपि॥ ४१

न रक्षिष्यन्ति मनुजाः स्थविरौ पितरावपि।
पुत्रान् सर्वार्थकुशलान्[3] क्षुद्राः शिश्नोदरम्भराः॥ ४२

स्वामी चाहे सर्वश्रेष्ठ ही क्यों न हो—जब सेवकलोग देखते हैं कि इसके पास धन-दौलत नहीं रही, तब उसे छोड़कर भाग जाते हैं। सेवक चाहे कितना ही पुराना क्यों न हो—परन्तु जब वह किसी विपत्तिमें पड़ जाता है, तब स्वामी उसे छोड़ देते हैं, । और तो क्या, जब गौएँ बकेन हो जाती हैं—दूध देना बन्द कर देती हैं, तब लोग उनका भी परित्याग कर देते हैं॥ ३६॥ प्रिय परीक्षित्! कलियुगके मनुष्य बड़े ही लम्पट हो जाते हैं, वे अपनी कामवासनाको तृप्त करनेके लिये ही किसीसे प्रेम करते हैं। वे विषयवासनाके वशीभूत होकर इतने दीन हो जाते हैं कि माता-पिता, भाई-बन्धु और मित्रोंको भी छोड़कर केवल अपनी साली और सालोंसे ही सलाह लेने लगते हैं॥ ३७॥ शूद्र तपस्वियोंका वेष बनाकर अपना पेट भरते और दान लेने लगते हैं। जिन्हें धर्मका रत्तीभर भी ज्ञान नहीं है, वे ऊँचे सिंहासनपर विराजमान होकर धर्मका उपदेश करने लगते हैं॥ ३८॥ प्रिय परीक्षित्! कलियुगकी प्रजा सूखा पड़नेके कारण अत्यन्त भयभीत और आतुर हो जाती है। एक तो दुर्भिक्ष और दूसरे शासकोंकी कर-वृद्धि! प्रजाके शरीरमें केवल अस्थिपञ्जर और मनमें केवल उद्वेग शेष रह जाता है। प्राण रक्षाके लिये रोटीका टुकड़ा मिलना भी कठिन हो जाता है॥ ३९॥ कलियुगमें प्रजा शरीर ढकनेके लिये वस्त्र और पेटकी ज्वाला शान्त करनेके लिये रोटी, पीनेके लिये पानी और सोनेके लिये दो हाथ जमीनसे भी वञ्चित हो जाती है। उसे दाम्पत्य-जीवन, स्नान और आभूषण पहननेतककी सुविधा नहीं रहती। लोगोंकी आकृति, प्रकृति और चेष्टाएँ पिशाचोंकी-सी हो जाती हैं॥ ४०॥ कलियुगमें लोग, अधिक धनकी तो बात ही क्या, कुछ कौड़ियोंके लिये आपसमें वैर-विरोध करने लगते और बहुत दिनोंके सद्भाव तथा मित्रताको तिलाञ्जलि दे देते हैं। इतना ही नहीं, वे दमड़ी-दमड़ीके लिये अपने सगे-सम्बन्धियोंतक-की हत्या कर बैठते और अपने प्रिय प्राणोंसे भी हाथ धो बैठते हैं॥ ४१॥ परीक्षित्! कलियुगके क्षुद्र प्राणी केवल कामवासनाकी पूर्ति और पेट भरनेकी धुनमें ही लगे रहते हैं। पुत्र अपने बूढ़े मा-बापकी भी रक्षा—पालन-पोषण नहीं करते, उनकी उपेक्षा कर देते हैं और पिता अपने निपुण-से-निपुण, सब कामोंमें योग्य पुत्रोंकी भी परवा नहीं करते, उन्हें अलग कर देते हैं॥ ४२॥

१.पितॄन् भ्रातॄन् सु०। २. हि। ३. भार्यां च कुलजां क्षुद्राः।

कलौ न राजञ्जगतां परं गुरुं
त्रिलोकनाथानतपादपङ्कजम् ।
प्रायेण मर्त्या भगवन्तमच्युतं
यक्ष्यन्ति पाखण्डविभिन्नचेतसः ॥ ४३

यन्नामधेयं म्रियमाण आतुरः
पतन् स्खलन् वा विवशो गृणन् पुमान् ।
विमुक्तकर्मार्गल उत्तमां गतिं
प्राप्नोति यक्ष्यन्ति न तं कलौ जनाः[1] ॥ ४४

पुंसां कलिकृतान् दोषान् द्रव्यदेशात्मसम्भवान् ।
सर्वान् हरति चित्तस्थो भगवान् पुरुषोत्तमः ॥ ४५

श्रुतः सङ्कीर्तितो ध्यातः पूजितश्चादृतोऽपि वा ।
नृणां धुनोति भगवान् हृत्स्थो जन्मायुताशुभम् ॥ ४६

यथा हेम्नि स्थितो वह्निर्दुर्वर्णं हन्ति धातुजम् ।
एवमात्मगतो विष्णुर्योगिनामशुभाशयम् ॥ ४७

विद्यातपःप्राणनिरोधमैत्री-
तीर्थाभिषेकव्रतदानजप्यैः ।
नात्यन्तशुद्धिं लभतेऽन्तरात्मा
यथा हृदिस्थे भगवत्यनन्ते ॥ ४८

तस्मात् सर्वात्मना राजन् हृदिस्थं कुरु केशवम् ।
म्रियमाणो[2] ह्यवहितस्ततो यासि[3] परां गतिम् ॥ ४९

परीक्षित् ! श्रीभगवान् ही चराचर जगत्‌के परम पिता और परम गुरु हैं। इन्द्र-ब्रह्मा आदि त्रिलोकाधिपति उनके चरणकमलोंमें अपना सिर झुकाकर सर्वस्व समर्पण करते रहते हैं। उनका ऐश्वर्य अनन्त है और वे एकरस अपने स्वरूपमें स्थित हैं। परन्तु कलियुगमें लोगोंमें इतनी मूढ़ता फैल जाती है, पाखण्डियोंके कारण लोगोंका चित्त इतना भटक जाता है कि प्रायः लोग अपने कर्म और भावनाओंके द्वारा भगवान्‌की पूजासे भी विमुख हो जाते हैं ॥ ४३ ॥ मनुष्य मरनेके समय आतुरताकी स्थितिमें अथवा गिरते या फिसलते समय विवश होकर भी यदि भगवान्‌के किसी एक नामका उच्चारण कर ले, तो उसके सारे कर्मबन्धन छिन्न-भिन्न हो जाते हैं और उसे उत्तम-से-उत्तम गति प्राप्त होती है। परन्तु हाय रे कलियुग ! कलियुगसे प्रभावित होकर लोग उन भगवान्‌की आराधनासे भी विमुख हो जाते हैं ॥ ४४ ॥

परीक्षित् ! कलियुगके अनेकों दोष हैं। कुल वस्तुएँ दूषित हो जाती हैं, स्थानोंमें भी दोषकी प्रधानता हो जाती है। सब दोषोंका मूल स्रोत तो अन्तःकरण है ही, परन्तु जब पुरुषोत्तमभगवान् हृदयमें आ विराजते हैं, तब उनकी सन्निधिमात्रसे ही सब-के-सब दोष नष्ट हो जाते हैं ॥ ४५ ॥ भगवान्‌के रूप, गुण, लीला, धाम और नामके श्रवण, सङ्कीर्तन, ध्यान, पूजन और आदरसे वे मनुष्यके हृदयमें आकर विराजमान हो जाते हैं। और एक-दो जन्मके पापोंकी तो बात ही क्या, हजारों जन्मोंके पापके ढेर-के-ढेर भी क्षणभरमें भस्म कर देते हैं ॥ ४६ ॥ जैसे सोनेके साथ संयुक्त होकर अग्नि उसके धातुसम्बन्धी मलिनता आदि दोषोंको नष्ट कर देती है, वैसे ही साधकोंके हृदयमें स्थित होकर भगवान् विष्णु उनके अशुभ संस्कारोंको सदाके लिये मिटा देते हैं ॥ ४७ ॥ परीक्षित् ! विद्या, तपस्या, प्राणायाम, समस्त प्राणियोंके प्रति मित्रभाव, तीर्थस्नान, व्रत, दान और जप आदि किसी भी साधनसे मनुष्यके अन्तःकरणकी वैसी वास्तविक शुद्धि नहीं होती, जैसी शुद्धि भगवान् पुरुषोत्तमके हृदयमें विराजमान हो जानेपर होती है ॥ ४८ ॥

परीक्षित् ! अब तुम्हारी मृत्युका समय निकट आ गया है। अब सावधान हो जाओ। पूरी शक्तिसे और अन्तःकरणकी सारी वृत्तियोंसे भगवान् श्रीकृष्णको अपने हृदयसिंहासनपर बैठा लो। ऐसा करनेसे अवश्य ही तुम्हें परमगतिकी प्राप्ति होगी ॥ ४९ ॥

१. नराः। २. म्रियः। ३. याति।

म्रियमाणैरभिध्येयो भगवान् परमेश्वरः ।
आत्मभावं नयत्यङ्ग सर्वात्मा सर्वसंश्रयः[1] ॥ ५०

जो लोग मृत्युके निकट पहुँच रहे हैं, उन्हें सब प्रकारसे परम ऐश्वर्यशाली भगवान्का ही ध्यान करना चाहिये। प्यारे परीक्षित्! सबके परम आश्रय और सर्वात्मा भगवान् अपना ध्यान करनेवालेको अपने स्वरूपमें लीन कर लेते हैं, उसे अपना स्वरूप बना लेते हैं॥ ५०॥

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं व्रजेत् ॥ ५१

परीक्षित्! यों तो कलियुग दोषोंका खजाना है, परन्तु इसमें एक बहुत बड़ा गुण है। वह गुण यही है कि कलियुगमें केवल भगवान् श्रीकृष्णका सङ्कीर्तन करनेमात्रसे ही सारी आसक्तियाँ छूट जाती हैं और परमात्माकी प्राप्ति हो जाती है॥ ५१॥

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात् ॥ ५२

सत्ययुगमें भगवान्का ध्यान करनेसे, त्रेतामें बड़े-बड़े यज्ञोंके द्वारा उनकी आराधना करनेसे और द्वापरमें विधिपूर्वक उनकी पूजा-सेवासे जो फल मिलता है, वह कलियुगमें केवल भगवन्नामका कीर्तन करनेसे ही प्राप्त हो जाता है॥ ५२॥



इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशस्कन्धे[2]
तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥



अथ चतुर्थोऽध्यायः

चार प्रकारके प्रलय

श्रीशुक उवाच

कालस्ते परमाण्वादिर्द्विपरार्धावधिर्नृप ।
कथितो युगमानं च शृणु कल्पलयावपि ॥ १

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित्! (तीसरे स्कन्धमें) परमाणुसे लेकर द्विपरार्धपर्यन्त कालका स्वरूप और एक-एक युग कितने-कितने वर्षोंका होता है, यह मैं तुम्हें बतला चुका हूँ। अब तुम कल्पकी स्थिति और उसके प्रलयका वर्णन भी सुनो॥ १॥

चतुर्युगसहस्रं च[3] ब्रह्मणो दिनमुच्यते ।
स कल्पो यत्र मनवश्चतुर्दश विशांपते ॥ २

राजन्! एक हजार चतुर्युगीका ब्रह्माका एक दिन होता है। ब्रह्माके इस दिनको ही कल्प भी कहते हैं। एक कल्पमें चौदह मनु होते हैं॥ २॥

तदन्ते प्रलयस्तावान् ब्राह्मी रात्रिरुदाहृता ।
त्रयो लोका इमे तत्र कल्पन्ते प्रलयाय हि ॥ ३

कल्पके अन्तमें उतने ही समयतक प्रलय भी रहता है। प्रलयको ही ब्रह्माकी रात भी कहते हैं। उस समय ये तीनों लोक लीन हो जाते हैं, उनका प्रलय हो जाता है॥ ३॥

एष नैमित्तिकः प्रोक्तः प्रलयो यत्र विश्वसृक् ।
शेतेऽनन्तासनो विश्वमात्मसात्कृत्य चात्मभूः[4] ॥ ४

इसका नाम नैमित्तिक प्रलय है। इस प्रलयके अवसरपर सारे विश्वको अपने अंदर समेटकर—लीन कर ब्रह्मा और तत्पश्चात् शेषशायी भगवान् नारायण भी शयन कर जाते हैं॥ ४॥

द्विपरार्धे त्वतिक्रान्ते ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ।
तदा प्रकृतयः सप्त कल्पन्ते प्रलयाय वै ॥ ५

इस प्रकार रातके बाद दिन और दिनके बाद रात होते-होते जब ब्रह्माजीकी अपने मानसे सौ वर्षकी और मनुष्योंकी दृष्टिमें दो परार्द्धकी आयु समाप्त हो जाती है, तब महत्तत्त्व, अहङ्कार और पञ्चतन्मात्रा—ये सातों प्रकृतियाँ अपने कारण मूल प्रकृतिमें लीन हो जाती हैं॥ ५॥

१. सर्वसम्भवः। २. न्धे युगानुवर्णनं तृती०। ३. तु। ४. विश्वभूः।